



डॉ० भीमराव अम्बेडकर और बौद्ध धर्म : एक अनुशीलन

प्रो० चन्द्र प्रकाश सिंह
विश्वविद्यालय इतिहास विभाग,
भूपेन्द्र नारायण मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा

सारांश

भारत की पावन और उर्वरा भूमि ने प्राचीन काल से ही ऐसे महान विद्वानों, चिंतकों, समाज-सुधारकों, दार्शनिकों और कर्मयोगियों को जन्म दिया है, जिन्होंने न केवल अपने ज्ञान, चिंतन और कार्यों से भारतीय समाज को नई दिशा प्रदान की, बल्कि संपूर्ण मानवता के लिए प्रेरणा का स्रोत बनने का गौरव प्राप्त किया। इस महान भूमि की विशेषता रही है कि जब-जब समाज अज्ञान, असमानता, रूढ़िवादिता, सामाजिक अन्याय और शोषण जैसी परिस्थितियों से घिरा है, तब-तब इसी धरती से ऐसे महापुरुषों का उदय हुआ है, जिन्होंने अपने अदम्य साहस, गहन विद्वत्ता, दूरदर्शी विचारों और अथक संघर्ष के माध्यम से समाज में परिवर्तन की नई चेतना उत्पन्न की। उनके विचारों और आदर्शों ने केवल अपने समय को ही प्रभावित नहीं किया, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए भी मार्गदर्शन का कार्य किया। ऐसे महान व्यक्तित्वों का जीवन हमें यह संदेश देता है कि सच्चा ज्ञान वहीं है जो समाज के वंचित और पीड़ित वर्गों के जीवन में परिवर्तन लाए तथा मानवता, समानता, स्वतंत्रता और न्याय की स्थापना में सहायक बने। इसलिए भारत की यह गौरवशाली धरती उन महान विभूतियों के योगदान के कारण सदैव स्मरणीय रहेगी, और उनके विचार, संघर्ष, आदर्श तथा सामाजिक कार्य आने वाली पीढ़ियों को निरंतर प्रेरणा देते रहेंगे।

इसी कड़ी के साकार रूप में इस धरा के महान विद्वान डॉ० भीमराव रामजी अंबेडकर को देखते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि प्रकृति ने इन्हें इस निमित्त ही चुना था, जिन्होंने इतने विषम परिस्थितियों का सामना करते हुए भी अपने आप को भारतीय संस्कृति और समाज के लिए समर्पित कर दिया और अपने उद्देश्य को पूर्ण करने में प्राण-पण से लगे रहें।

एक मेधावी युवक अमेरिका व इंग्लैण्ड से उच्च शिक्षा प्राप्त करके बैरिस्टर की डिग्री लेकर भारत आए। उन्होंने बम्बई हाई कोर्ट में प्रैक्टिस की। उनकी वैधिक प्रकाण्डता का लोहा तो सभी ने मान लिया। परन्तु उनको अस्पश्य मानकर ही उनसे व्यवहार किया जाता रहा। इसका कारण एक ही था कि वह अछूत कहे जाने वाले परिवार-महार जाति में उत्पन्न हुए थे।¹ कोई और युवक होता तो शायद वह इन अपमानजनक परिस्थितियों से निराश होकर विदेश में ही बस जाने का विचार करता और वहीं अपनी योग्यता के अनुरूप जीवन व्यतीत करता। किन्तु डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने ऐसा नहीं किया। विदेशों में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बाद भी उन्होंने भारत लौटकर अपने जीवन

को सामाजिक परिवर्तन और वंचित वर्गों के अधिकारों के लिए समर्पित किया। जातिगत अपमान और सामाजिक बहिष्कार के व्यक्तिगत अनुभवों ने उनके सामाजिक चिंतन को गहराई से प्रभावित किया।²

डॉ. अम्बेडकर ने अपने जीवन में शिक्षा, कानून, अर्थशास्त्र और राजनीति के क्षेत्रों में असाधारण योगदान दिया। वे अर्थशास्त्र एवं विधि के प्रकाण्ड विद्वान, भारतीय संविधान की प्रारूप समिति के अध्यक्ष, दलितों तथा अन्य वंचित समुदायों के अधिकारों के प्रमुख प्रवक्ता, समाज-सुधारक और महान लेखक के रूप में स्मरण किए जाते हैं। उन्होंने सामाजिक समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व को अपने सामाजिक दर्शन का महत्वपूर्ण आधार बनाया तथा जाति-व्यवस्था के विरुद्ध आजीवन संघर्ष किया।³

कूट भाषा : मानवता, समानता, स्वतंत्रता, संघर्ष, आदर्श, सामाजिक कार्य, जातिगत अपमान, सामाजिक बहिष्कार, समाज-सुधारक।

प्रारंभिक जीवन

डॉ. भीमराव अम्बेडकर का जन्म 14 अप्रैल 1891 को तत्कालीन मध्य भारत के महु (वर्तमान डॉ. अम्बेडकर नगर, मध्य प्रदेश) में हुआ था। उनके पिता रामजी मालोजी सकपाल ब्रिटिश भारतीय सेना में कार्यरत थे। अम्बेडकर का जन्म महार समुदाय में हुआ था, जिसे उस समय हिन्दू समाज में अस्पृश्य माना जाता था। जातिगत भेदभाव के कारण बालक भीमराव को बचपन से ही सामाजिक अपमान और विषमता का सामना करना पड़ा। भारत सरकार के आधिकारिक विवरण में भी उनके जन्म और महार समुदाय से संबंधित सामाजिक पृष्ठभूमि की पुष्टि होती है।

बालक भीमराव के विद्यालयी जीवन का आरम्भ ही जातिगत भेदभाव और सामाजिक अपमान की कठोर अनुभूतियों से हुआ। वे प्रतिभाशाली और अध्ययनशील बालक थे, किन्तु उनकी प्रतिभा से अधिक उनके जन्म की जाति को महत्व दिया जाता था। विद्यालय में उन्हें सवर्ण हिन्दू बालकों के साथ बेंच पर बैठने की अनुमति नहीं थी। उन्हें कक्षा के भीतर एक अलग स्थान पर बैठना पड़ता था और इसके लिए वे प्रतिदिन अपने साथ टाट का एक टुकड़ा लेकर जाते थे। वह टाट केवल बैठने का साधन नहीं था, बल्कि उस समय की सामाजिक व्यवस्था द्वारा उनके लिए निर्धारित 'अलगाव' और अस्पृश्यता का प्रतीक था। एक छोटे बालक को शिक्षा के मंदिर में भी यह अनुभव कराया जाता था कि वह अन्य विद्यार्थियों के समान नहीं है।

विद्यालय में पानी पीने जैसी सामान्य मानवीय आवश्यकता भी उनके लिए अपमान और निर्भरता का विषय बनी हुई थी। वे स्वयं नल की टोंटी को छूकर पानी नहीं पी सकते थे। किसी चपरासी अथवा सवर्ण बालक द्वारा नल खोलने पर ही वे पानी पी पाते थे। इस प्रकार पानी जैसी जीवन की मूलभूत आवश्यकता भी जातिगत ऊँच-नीच की व्यवस्था से नियंत्रित थी। जिस उम्र में बालक को शिक्षा, खेल और मित्रता की स्वाभाविक दुनिया में रहना चाहिए, उस उम्र में भीमराव को अपनी सामाजिक पहचान के कारण अपमान, प्रतीक्षा और असमानता का सामना करना पड़ रहा था।⁴

भेदभाव केवल बैठने और पानी पीने तक सीमित नहीं था। विद्यालय में अछूत विद्यार्थियों की कापियों को छूने तक से कुछ अध्यापक परहेज करते थे। ज्ञान देने वाले शिक्षक और ज्ञान प्राप्त करने वाले विद्यार्थी के बीच भी जाति की दीवार खड़ी कर दी गई थी। शिक्षा का उद्देश्य जहां मनुष्य

में विवेक, समानता और मानवता का विकास करना माना जाता है, वहीं उस समय की सामाजिक रूढ़ियाँ विद्यालय जैसी संस्था को भी अस्पृश्यता से मुक्त नहीं रख सकी थीं। इससे स्पष्ट होता है कि जाति-व्यवस्था केवल सामाजिक संबंधों तक सीमित नहीं थी, बल्कि उसने शिक्षा जैसे मूलभूत अधिकार को भी प्रभावित किया था। बाद में अम्बेडकर ने अपने संस्मरण *Waiting for a Visa* में अपने बाल्यकाल के जातिगत अनुभवों का वर्णन किया। इन अनुभवों ने उनके मन पर गहरा प्रभाव डाला और आगे चलकर यही अनुभव उनके सामाजिक दर्शन तथा अस्पृश्यता-विरोधी आंदोलन की महत्वपूर्ण पृष्ठभूमि बने। बालक भीमराव ने इन परिस्थितियों के सामने आत्मसमर्पण नहीं किया। उन्होंने शिक्षा को सामाजिक मुक्ति का सबसे शक्तिशाली साधन माना। वे अत्यन्त परिश्रमी और अध्ययनशील विद्यार्थी थे। कठिन परिस्थितियों के बावजूद उन्होंने अपनी शिक्षा जारी रखी और बम्बई विश्वविद्यालय से उच्च शिक्षा प्राप्त की। इसके बाद बड़ौदा राज्य की छात्रवृत्ति के माध्यम से वे उच्च शिक्षा के लिए अमेरिका गए।⁵

उच्च शिक्षा हेतु विदेश प्रस्थान

1913 में वे कोलम्बिया विश्वविद्यालय, न्यूयॉर्क पहुँचे, जहाँ उन्होंने अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, इतिहास, दर्शन तथा राजनीति आदि विषयों का अध्ययन किया। उन्होंने वहाँ से एम.ए. तथा पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। कोलम्बिया में अध्ययन के दौरान उन्हें जॉन ड्यूई जैसे प्रसिद्ध विद्वानों के विचारों से परिचित होने का अवसर मिला।⁶

इसके पश्चात् वे इंग्लैण्ड गए। उन्होंने London School of Economics में अध्ययन किया तथा विधि की शिक्षा के लिए Gray's Inn में प्रवेश लिया। आर्थिक कठिनाइयों और अनेक बाधाओं के बावजूद उन्होंने अध्ययन जारी रखा। उन्होंने लन्दन में The Problem of the Rupee विषय पर अपना शोध कार्य पूरा किया और उन्हें D.Sc. (Economics) की उपाधि मिली। साथ ही उन्होंने विधि की शिक्षा प्राप्त कर Barrister-at-Law की योग्यता हासिल की।⁷

भारत पुनः आगमन

21 अगस्त 1917 ई. को उच्च शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् डॉ. भीमराव अम्बेडकर अमेरिका से भारत लौटे और बम्बई पहुँचे। उन्होंने विदेश में रहकर अर्थशास्त्र, राजनीति और कानून जैसे विषयों का गहन अध्ययन किया था। उनकी प्रतिभा, विद्वत्ता और शैक्षणिक उपलब्धियाँ असाधारण थीं। इसके बावजूद भारत लौटने पर उन्हें उस सामाजिक वास्तविकता का सामना करना पड़ा, जिससे उनका बाल्यकाल परिचित हो चुका था। उनकी विद्वत्ता के सामने भी जातिगत पूर्वाग्रह की दीवार खड़ी थी।

बड़ौदा राज्य के महाराजा सयाजीराव गायकवाड़ ने डॉ. अम्बेडकर की शिक्षा में महत्वपूर्ण सहयोग दिया था। विदेश से शिक्षा पूर्ण करके लौटने के बाद उन्हें बड़ौदा राज्य की सेवा में योगदान देना था। 15 सितम्बर 1917 ई. को महाराजा की ओर से यह राजाज्ञा जारी की गई कि डॉ. अम्बेडकर के बड़ौदा लौटने पर उनका स्वागत किया जाए। एक दृष्टि से यह आदेश उनकी प्रतिभा और योग्यता के प्रति सम्मान का प्रतीक था। किन्तु तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था में जातिगत पूर्वाग्रह इतने गहरे थे कि शासकीय आदेश भी सामाजिक भेदभाव की मानसिकता को पूरी तरह समाप्त नहीं कर सका। डॉ. अम्बेडकर जब बड़ौदा पहुँचे, तब उन्हें अपेक्षित सम्मान और स्वागत नहीं

मिला। जिस व्यक्ति ने विदेश में उच्च शिक्षा प्राप्त करके अपनी योग्यता सिद्ध की थी, उसे केवल इसलिए सामाजिक उपेक्षा का सामना करना पड़ा क्योंकि वह तथाकथित 'अछूत' जाति में जन्मा था। राजाज्ञा के बावजूद स्थानीय सामाजिक मानसिकता उनके प्रति सम्मानपूर्ण व्यवहार करने के लिए तैयार नहीं थी। परिणामतः उन्हें बड़ौदा में लगभग अकेले ही प्रवेश करना पड़ा। यह घटना भारतीय समाज की उस विडम्बना को उजागर करती है जिसमें व्यक्ति की योग्यता और जन्म के बीच संघर्ष दिखाई देता है। बड़ौदा की घटनाओं ने डॉ. अम्बेडकर के मन पर गहरा प्रभाव डाला।⁸

अम्बेडकर की दृष्टि में समस्या केवल व्यक्तिगत अपमान की नहीं थी, बल्कि उस सामाजिक व्यवस्था की थी जो मनुष्य का मूल्य उसके जन्म से निर्धारित करती थी। इसलिए उन्होंने शिक्षा के साथ-साथ सामाजिक संगठन और राजनीतिक अधिकारों को भी महत्त्व दिया। 1924 में उन्होंने बहिष्कृत हितकारिणी सभा की स्थापना की, जिसका उद्देश्य वंचित वर्गों में शिक्षा और सामाजिक चेतना का विकास करना तथा उनके अधिकारों के लिए संघर्ष करना था।⁹

अस्पृश्यता निवारण के क्षेत्र में कार्य

अम्बेडकर ने दलितों को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक और संगठित करने का व्यापक अभियान चलाया। उनका प्रसिद्ध संदेश— "शिक्षित बनो, संगठित हो और संघर्ष करो" उनके सामाजिक आंदोलन की मूल भावना को अभिव्यक्त करता है। उनका विश्वास था कि केवल दूसरों की दया पर निर्भर रहकर कोई समुदाय सम्मानजनक जीवन प्राप्त नहीं कर सकता; अधिकारों के लिए स्वयं जागरूक और संगठित होना आवश्यक है।¹⁰ उनके सामाजिक आंदोलनों में महाड़ सत्याग्रह विशेष रूप से महत्वपूर्ण था। 1927 में उन्होंने महाड़ के चावदार तालाब से पानी पीने के अधिकार के लिए आंदोलन किया। यह आंदोलन केवल पानी के अधिकार तक सीमित नहीं था, बल्कि सार्वजनिक संसाधनों पर समान नागरिक अधिकार की घोषणा था। अम्बेडकर ने अस्पृश्यता को मानव गरिमा के विरुद्ध एक गंभीर सामाजिक अपराध के रूप में देखा। इसी प्रकार उन्होंने मंदिर प्रवेश के लिए भी आंदोलन चलाए। नासिक के कालाराम मंदिर प्रवेश आंदोलन ने धार्मिक-सामाजिक समानता के प्रश्न को व्यापक स्तर पर सामने रखा। इन आंदोलनों के माध्यम से अम्बेडकर ने यह स्पष्ट किया कि सार्वजनिक जीवन में समानता किसी विशेष वर्ग की कृपा नहीं, बल्कि प्रत्येक मनुष्य का अधिकार है।

अम्बेडकर की सामाजिक दृष्टि अपने समय के अन्य सुधारकों से कई मामलों में अलग थी। स्वामी दयानन्द सरस्वती, महात्मा गांधी और ठक्कर बापा आदि ने भी अस्पृश्यता और सामाजिक सुधार के प्रश्न पर महत्वपूर्ण कार्य किया, लेकिन अम्बेडकर का जोर विशेष रूप से अधिकार, प्रतिनिधित्व, कानून और राजनीतिक शक्ति पर था। वे मानते थे कि सामाजिक समानता को केवल नैतिक अपील के आधार पर नहीं छोड़ा जा सकता; उसे कानूनी और संवैधानिक संरक्षण भी मिलना चाहिए।¹¹

महात्मा गाँधी जी और अम्बेडकर के बीच मतभेद

दलितों के राजनीतिक प्रतिनिधित्व के प्रश्न पर अम्बेडकर और महात्मा गांधी के बीच गंभीर मतभेद हुए। अम्बेडकर पृथक निर्वाचक मंडल के माध्यम से दलितों को स्वतंत्र राजनीतिक प्रतिनिधित्व दिलाना चाहते थे। 1932 में ब्रिटिश सरकार द्वारा कम्यूनल अवॉर्ड में दलितों के लिए पृथक निर्वाचक मंडल की व्यवस्था किए जाने के बाद गांधी ने इसका विरोध किया। अंततः पूना समझौता (1932) हुआ, जिसके तहत पृथक निर्वाचक मंडल के स्थान पर संयुक्त निर्वाचन क्षेत्र में अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित सीटों की व्यवस्था स्वीकार की गई।¹² अम्बेडकर को केवल दलित समाज का नेता मानना उनके विराट व्यक्तित्व को सीमित करना होगा। वे अर्थशास्त्री, विधिवेत्ता, समाजशास्त्री, राजनीतिज्ञ, लेखक और संविधान-चिंतक थे। उनकी रचनाओं में सामाजिक न्याय, जाति, अर्थव्यवस्था, श्रम, राजनीति, धर्म और लोकतंत्र जैसे अनेक विषयों पर गंभीर विचार मिलता है।

अम्बेडकर को असली भय यह था कि उच्च वर्ग अछूत वर्ग को अपने समकक्ष नहीं आने देगा। वे भी जानते थे कि जातिवाद एक संकीर्ण भावना है किन्तु वे यह भी जानते थे कि इतनी जल्दी सवर्णों में परिवर्तन आने वाला नहीं है कि वे अवर्णों को गले लगा लें दलित एवं अछूत संवैधानिक एवं राजनीतिक अधिकारों के माध्यम से ही अपनी स्थिति सुधार कर सकते हैं और इस तिरस्कृत वर्ग को उच्च वर्ग सर्वदा हेय दृष्टि से देखेगा।¹³

उनकी प्रसिद्ध कृति “Annihilation of Caste (जाति का विनाश)” 1936 में प्रकाशित हुई। मूल रूप से यह भाषण लाहौर के जात-पात तोड़क मंडल के सम्मेलन के लिए तैयार किया गया था, लेकिन उनके विचारों से असहमति के कारण सम्मेलन में उन्हें भाषण देने का अवसर नहीं मिला। बाद में उन्होंने इसे पुस्तकाकार प्रकाशित किया। इस ग्रंथ में उन्होंने जाति-व्यवस्था की संरचना और उसके सामाजिक प्रभावों की तीखी आलोचना की तथा जाति के पूर्ण उन्मूलन की आवश्यकता पर बल दिया।

भारतीय स्वतंत्रता के बाद डॉ. अम्बेडकर को देश का प्रथम विधि एवं न्याय मंत्री बनाया गया। 29 अगस्त 1947 को संविधान सभा ने प्रारूप समिति का गठन किया और अम्बेडकर को उसका अध्यक्ष बनाया गया।¹⁴ संविधान में समानता, स्वतंत्रता, भेदभाव-निषेध और अस्पृश्यता के उन्मूलन जैसे प्रावधान उनके सामाजिक न्याय संबंधी चिंतन से विशेष रूप से जुड़े हुए हैं।¹⁵ भारतीय संविधान का अनुच्छेद 17 अस्पृश्यता को समाप्त करता है और उसके किसी भी रूप में व्यवहार को निषिद्ध करता है। इस प्रकार जिस सामाजिक व्यवस्था ने अम्बेडकर के बचपन को अपमानित किया था, उसके विरुद्ध संवैधानिक स्तर पर निर्णायक प्रहार किया गया।

स्त्रियों की समानता के प्रश्न पर भी अम्बेडकर का दृष्टिकोण अत्यंत प्रगतिशील था। विधि मंत्री के रूप में उन्होंने हिन्दू कोड बिल के माध्यम से हिन्दू महिलाओं को विवाह, उत्तराधिकार और संपत्ति आदि के क्षेत्र में अधिक समान अधिकार देने का प्रयास किया। पर्याप्त राजनीतिक समर्थन न मिलने पर उन्होंने 1951 में विधि मंत्री के पद से इस्तीफा दे दिया।¹⁶

अम्बेडकर का राष्ट्रवाद सामाजिक न्याय से जुड़ा हुआ था। वे चाहते थे कि भारत राजनीतिक रूप से स्वतंत्र होने के साथ-साथ सामाजिक रूप से भी स्वतंत्र और समान बने। उनके लिए

लोकतंत्र केवल चुनाव और सरकार की व्यवस्था नहीं था, बल्कि समाज में स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व की स्थापना भी उसका आवश्यक अंग था। 25 नवम्बर 1949 को संविधान सभा में अपने प्रसिद्ध भाषण में उन्होंने राजनीतिक लोकतंत्र की सफलता के लिए सामाजिक लोकतंत्र की आवश्यकता पर बल दिया।¹⁷ जाति-व्यवस्था के विरुद्ध उनका संघर्ष उनके जीवन का केंद्रीय पक्ष था। उन्होंने जाति को केवल सामाजिक पहचान नहीं, बल्कि ऐसी व्यवस्था माना जो मनुष्यों के बीच स्थायी असमानता पैदा करती है। *Annihilation of Caste* में उन्होंने जाति-व्यवस्था की वैचारिक और सामाजिक नींव का विस्तृत आलोचनात्मक परीक्षण किया।

अम्बेडकर और हिन्दू धर्म

डॉ. अम्बेडकर के अनुसार, “भारत में सामाजिक संरचना जातिप्रथा पर आधारित जात-पात हिन्दू सभ्यता एवं संस्कृति की विशेष उपज है।” ‘मेरा निजी दर्शन’ के अन्तर्गत भाषण-शृंखला में डॉ. अम्बेडकर ने 3 अक्टूबर, 1954 को आकाशवाणी दिल्ली से एक प्रसारण किया जो निम्न है— ‘प्रत्येक व्यक्ति का अपना दर्शन होना चाहिए जिससे वह अपना आचरण परख सके और दर्शन ही तो वह मापदण्ड है जिससे कोई व्यक्ति स्वयं को परख सकता है। गीता सांख्य दर्शन के त्रिगुण सिद्धान्त पर आधारित है। मेरे विचार से यह कपिल के दर्शन का निर्दयी विभाग है। गीता में जात-पात प्रणाली और श्रेणीबद्ध असमानता को हिन्दू समाज दर्शन का नियम बना दिया है। निश्चित रूप से मेरा समाज दर्शन तीन शब्दों स्वतन्त्रता, समानता और भ्रातृत्व भाव पर आधारित है। किसी को इस बात की भ्रान्ति नहीं होनी चाहिए कि मैंने यह दर्शन फ्रांस की क्रान्ति से लिया है। मेरे दर्शन की जड़ें धर्म में हैं न कि राजनीति विज्ञान में। मैंने यह दर्शन महात्मा बुद्ध की शिक्षाओं से प्राप्त किया है।’

दिसम्बर 1954 में तृतीय विश्व बौद्ध सम्मेलन में बोलते हुए उन्होंने कहा, मैं बौद्ध धर्म को भारत में जीवित रखने के प्रयत्न स्वरूप कई उद्यमों में सफल हो चुका हूँ। राष्ट्रपति भवन और संसद में बौद्ध चिन्ह तथा राष्ट्रध्वज में अशोक चक्र का चिन्ह एवं बुद्ध जयन्ती के उपलक्ष में समस्त भारत में अवकाश आदि उनके सफल प्रयासों में से कुछ है।¹⁸

हिन्दू धर्म के प्रति अपनी प्रतिक्रिया में उन्होंने कहा था “जो धर्म तुम्हें मनुष्य के रूप में स्वीकार नहीं करना चाहता, जो धर्म तुम्हें पीने के लिए पानी नहीं देना चाहता, जो धर्म तुम्हारे ज्ञान एवं शिक्षा के अधिकार छीन लेता है, जो धर्म तुम्हें भौतिक उत्कर्ष में बाधा पहुँचाता है, जो धर्म अपने अनुयायियों को अपने ही धर्मावलम्बियों से मानवीयता का आचरण करना नहीं सिखलाता, वह धर्म न होकर एक बीमारी है। जो धर्म अपने अनुयायियों को अमंगल जानवरों के स्पर्श को सहने को कहता है, किन्तु अपने ही धर्मावलम्बियों के स्पर्श को पाप घोषित करता है वह धर्म न होकर विशुद्ध पागलपन है। जो धर्म कुछ वर्गों को धन संचय नहीं करने देता, हाथों में शस्त्र लेने की इजाजत नहीं देता, वह धर्म-धर्म न होकर मनुष्य जीवन की विडम्बना है। जो धर्म अज्ञानियों को अज्ञानी, निर्धनों को निर्धन रहने की सीख देता है, वह धर्म न होकर भयावह कैदखाना है।”¹⁹ डॉ. अम्बेडकर के अनुसार, व्यक्ति के जीवन में धर्म की आवश्यकता के चार प्रमुख कारण हैं—

(अ) समाज की स्थिरता और नियन्त्रण के लिए नीति की आवश्यकता है। यह नीति ही धर्म है।

(ब) धर्म के अस्तित्व के लिए उसे बुद्धि प्रमाण्यवादी होना चाहिए। विज्ञान बुद्धि प्रमाण्यवादी है।

(स) केवल 'नीति संहिता' का अर्थ धर्म नहीं है। धर्म की नीति-संहिता में स्वतन्त्रता, समानता और बन्धुत्व इन मूलभूत तत्त्वों को मान्यता प्राप्त होनी चाहिए। —

(द) दरिद्रता को पवित्र मानने का आग्रह किसी भी धर्म को नहीं करना चाहिए अर्थात् दरिद्रता का उदात्तीकरण भी नहीं होना चाहिए।²⁰

बी. बी. सी. लन्दन के साक्षात्कार में डॉ. अम्बेडकर ने कहा— मैं बौद्ध धर्म को इसलिए प्रथमिकता देता हूँ; क्योंकि इसमें तीन सिद्धन्तों (बुद्ध, धम्म और संघ) का समुच्चय पाया जाता है, जो अन्य किसी धर्म में नहीं मिलता। बौद्ध धर्म क्रान्ति की अपेक्षा सूझ-बूझ की शिक्षा देता है। वह करुणा (प्रेम एवं भ्रातृत्व) और समता सिखलता है। ये वे वस्तुएँ हैं जो आदर्श एवं प्रसन्न जीवन के लिए मनुष्य के लिए अनिवार्य हैं। ईश्वर और आत्मा समाज को नहीं बचा सकते। मार्क्सवाद ने समस्त विश्व की धार्मिक प्रणाली को झकझोर दिया था।

मुझे प्रतीत होता है कि हिन्दू समाज को नैतिक पुनरुद्धार की आवश्यकता है, जिसे विलम्बित करना खतरनाक होगा। प्रश्न यह है कि इस नैतिक पुनरुद्धार को कौन निर्धारित और नियंत्रित कर सकता है। स्पष्ट रूप से वे लोग जो अपना बौद्धिक पुनरुद्धार कर चुके हैं और वे जो इतने ईमानदार हैं कि बौद्धिक पुनरुद्धार से पैदा हुए विश्वास को दिखाने का साहस जिनके पास है।²¹ इस प्रकार हम देखते हैं कि डॉ. अम्बेडकर का विरोध हिन्दू धर्म एवं हिन्दू समाज में व्याप्त पाखण्ड एवं जातीय दम्भ के प्रति था, उनका आक्रोश कथनी-करनी के उस भेद के प्रति था जो चींटियों को आटा 'गिराने, मछलियों को आटे की गोलियाँ खिलाने की प्रेरणा तो देता है, लेकिन एक अछूत के साथ पशु से भी बदतर व्यवहार करता है।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर का इस्लाम धर्म के प्रति दृष्टिकोण

डॉ. भीमराव अम्बेडकर का इस्लाम के प्रति दृष्टिकोण आलोचनात्मक था। उन्होंने इस्लाम को मुख्यतः सामाजिक समानता, व्यक्तिगत स्वतंत्रता, स्त्री-स्थिति, जातिगत विभाजन और राजनीतिक संगठन की कसौटी पर परखा। उनका उद्देश्य किसी धर्म की निंदा करना नहीं, बल्कि यह देखना था कि वह धर्म भारत के दलितों को समानता, स्वतंत्रता, बंधुत्व और मानवीय गरिमा प्रदान कर सकता है या नहीं।

अम्बेडकर का मानना था कि धर्म का मूल्य उसके सिद्धांतों के साथ-साथ उसके अनुयायियों के वास्तविक सामाजिक जीवन से भी निर्धारित होता है। इसी दृष्टि से उन्होंने मुस्लिम समाज में मौजूद सामाजिक विभाजनों की आलोचना की। *Pakistan or the Partition of India* में उन्होंने भारतीय मुस्लिम समाज में सामाजिक स्तरीकरण और जाति-सदृश भेदों की चर्चा की। इसलिए वे इस धारणा को स्वीकार नहीं करते थे कि केवल इस्लाम ग्रहण कर लेने से अस्पृश्यता और सामाजिक भेदभाव की सभी समस्याएँ स्वतः समाप्त हो जाएँगी। अम्बेडकर ने मुस्लिम समाज में स्त्रियों की स्थिति और सामाजिक रुढ़ियों पर भी आलोचनात्मक विचार व्यक्त किए। *Pakistan or the Partition of India* में उन्होंने पर्दा-प्रथा तथा महिलाओं के सामाजिक जीवन पर उसके

प्रभाव की चर्चा की। उनके लिए किसी भी धर्म की सामाजिक व्यवस्था का मूल्यांकन इस आधार पर होना चाहिए कि वह समाज के सभी सदस्यों को कितनी स्वतंत्रता और समानता प्रदान करती है।

उनका दृष्टिकोण केवल सामाजिक प्रश्नों तक सीमित नहीं था। उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम राजनीतिक संबंधों का भी गहन अध्ययन किया। मुस्लिम लीग, साम्प्रदायिक राजनीति और पाकिस्तान की मांग के संदर्भ में अम्बेडकर ने अपने स्वतंत्र विचार प्रस्तुत किए। वे न तो कांग्रेस की राजनीति को अंतिम सत्य मानते थे और न ही मुस्लिम लीग के राजनीतिक दावों को बिना आलोचना स्वीकार करते थे। उनका मुख्य सरोकार भारत के विभिन्न समुदायों के बीच न्यायपूर्ण राजनीतिक व्यवस्था स्थापित करना था।²² उनका मानना था कि इस्लाम का दृष्टिकोण राष्ट्र और राष्ट्रवाद के प्रति प्रेम और समर्पण न होकर धर्म के प्रति निष्ठा पर आधारित है।

धर्म-परिवर्तन के प्रश्न पर भी अम्बेडकर ने इस्लाम सहित अनेक धर्मों पर विचार किया। 1935 में उन्होंने हिन्दू धर्म छोड़ने की घोषणा की, लेकिन तत्काल किसी दूसरे धर्म को स्वीकार नहीं किया। उन्होंने सिख धर्म, ईसाई धर्म और इस्लाम सहित विभिन्न धार्मिक परंपराओं का अध्ययन किया। अंततः उन्हें बौद्ध धर्म अपने सामाजिक दर्शन के अधिक निकट दिखाई दिया।²³ अम्बेडकर के लिए बौद्ध धर्म की विशेषता थी कि उसमें प्रज्ञा, करुणा और समता का समन्वय मिलता है। 1956 में BBC को दिए अपने प्रसिद्ध साक्षात्कार में उन्होंने बौद्ध धर्म को इसलिए प्राथमिकता देने की बात कही क्योंकि ये सिद्धांत उन्हें मनुष्य के आदर्श और सुखी जीवन के लिए आवश्यक लगे।²⁴

इस प्रकार, अम्बेडकर का इस्लाम के प्रति दृष्टिकोण आलोचनात्मक और तुलनात्मक था। उन्होंने इस्लाम के समानता के आदर्श को समझने का प्रयास किया, लेकिन भारतीय मुस्लिम समाज की सामाजिक वास्तविकताओं और राजनीतिक परिस्थितियों को भी गंभीरता से देखा। अंततः उन्होंने इस्लाम को अपने सामाजिक-धार्मिक आदर्शों के लिए पर्याप्त उपयुक्त नहीं पाया। उनका धर्म-परिवर्तन मूलतः सामाजिक मुक्ति, आत्मसम्मान और मानवतावादी मूल्यों की खोज का परिणाम था।

अम्बेडकर और बौद्ध धर्म

अम्बेडकर के जीवन का अंतिम महत्वपूर्ण अध्याय बौद्ध धर्म ग्रहण करना था। 14 अक्टूबर 1956 को नागपुर में उन्होंने बौद्ध धर्म स्वीकार किया और उनके साथ बड़ी संख्या में अनुयायियों ने भी बौद्ध धर्म ग्रहण किया। यह घटना उनके दीर्घकालीन सामाजिक संघर्ष की महत्वपूर्ण परिणति थी। उन्होंने बौद्ध धर्म में नैतिकता, समानता, विवेक और मानवीय गरिमा के ऐसे तत्व देखे जो उनके सामाजिक दर्शन के अनुकूल थे।²⁵

अम्बेडकर धर्म को केवल पूजा-पद्धति या व्यक्तिगत मोक्ष का साधन नहीं मानते थे। उनके लिए धर्म का मूल्य इस बात से निर्धारित होना चाहिए कि वह मनुष्य के सामाजिक जीवन को कितना न्यायपूर्ण बनाता है। वे ऐसा धर्म चाहते थे जो स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व को स्वीकार करे तथा मनुष्य को जन्म के आधार पर ऊँचा-नीचा न माने। जाति-व्यवस्था और अस्पृश्यता के अपने अनुभवों ने अम्बेडकर को हिन्दू सामाजिक व्यवस्था की कठोर आलोचना के लिए प्रेरित किया। बाद के वर्षों में उनका विश्वास और मजबूत हुआ कि अस्पृश्यता को केवल सुधारवादी उपायों से समाप्त करना

पर्याप्त नहीं है। उनके विचार में दलितों को ऐसी धार्मिक-सामाजिक व्यवस्था चाहिए जिसमें उनकी मानव गरिमा सुरक्षित हो।²⁶ आधुनिक विद्वानों ने भी अम्बेडकर के विचार में इस परिवर्तन को रेखांकित किया है कि वे प्रारंभिक मंदिर-प्रवेश आंदोलनों से आगे बढ़कर हिन्दू सामाजिक व्यवस्था की मूल संरचना की आलोचना तक पहुँचे।

अम्बेडकर ने 1935 में येवला(नासिक) सम्मेलन के अवसर पर घोषणा की थी कि वे हिन्दू के रूप में जन्मे हैं, लेकिन हिन्दू के रूप में मृत्यु नहीं पाएँगे। इसके बाद उन्होंने विभिन्न धर्मों का गंभीर अध्ययन किया। उनका उद्देश्य केवल हिन्दू धर्म को छोड़ना नहीं था, बल्कि ऐसा धर्म चुनना था जो उनके सामाजिक आदर्शों के अनुकूल हो।²⁷ उन्होंने इस्लाम, ईसाई धर्म, सिख धर्म और बौद्ध धर्म सहित विभिन्न धार्मिक परंपराओं का अध्ययन किया। अंततः बौद्ध धर्म उन्हें इसलिए अधिक उपयुक्त लगा क्योंकि उसमें तर्क, नैतिकता और सामाजिक समानता के तत्व उन्हें विशेष रूप से महत्वपूर्ण दिखाई दिए।

अम्बेडकर के बौद्ध धर्म की ओर आकर्षित होने के पीछे कई कारण थे— **पहला, समानता:** बुद्ध के धम्म में मनुष्य की श्रेष्ठता जन्म से नहीं बल्कि उसके आचरण और नैतिक जीवन से निर्धारित होती है। **दूसरा, तर्कशीलता:** अम्बेडकर को बौद्ध धर्म की वह प्रवृत्ति आकर्षित करती थी जिसमें अंधविश्वास की अपेक्षा विवेक और अनुभव को महत्व दिया जाता है। **तीसरा, नैतिकता:** अम्बेडकर के लिए धर्म का केंद्र नैतिक आचरण था। वे ऐसे धर्म को महत्व देते थे जो व्यक्ति को जिम्मेदार और समाज के प्रति संवेदनशील बनाए। **चौथा, सामाजिक बंधुत्व:** बौद्ध धम्म में करुणा, मैत्री और सामाजिक सद्भाव की अवधारणाएँ अम्बेडकर के लोकतांत्रिक आदर्शों से जुड़ती थीं। **पाँचवाँ, मानव गरिमा:** बौद्ध धर्म अपनाकर अम्बेडकर दलित समाज को ऐसी पहचान देना चाहते थे जिसमें उसे जन्म-आधारित हीनता स्वीकार न करनी पड़े।²⁸

अम्बेडकर ने अपने जीवन के अंतिम चरण में *The Buddha and His Dhamma* की रचना की। यह उनकी बौद्ध चिंतन की सबसे महत्वपूर्ण कृति है। इसकी भूमिका 15 मार्च 1956 को लिखी गई थी। सरकारी संकलन में इस रचना की भूमिका तथा उसके लेखन से संबंधित विवरण उपलब्ध है। इस पुस्तक में अम्बेडकर ने बुद्ध के जीवन और धम्म की ऐसी व्याख्या प्रस्तुत की जो उनके सामाजिक दर्शन से जुड़ी हुई थी। इसलिए उनका बौद्ध धर्म परंपरागत धार्मिक व्याख्या से अलग दिखाई देता है। उन्होंने बुद्ध को मुख्यतः नैतिक, सामाजिक और तर्कशील चिंतक के रूप में प्रस्तुत किया। अम्बेडकर की दृष्टि में बुद्ध का धम्म व्यक्ति और समाज दोनों के नैतिक पुनर्गठन का माध्यम था। इसी कारण उनका बौद्ध धर्म केवल व्यक्तिगत मुक्ति पर केंद्रित नहीं था, बल्कि सामाजिक न्याय और मानव-मुक्ति से भी जुड़ा था।

अम्बेडकर ने 14 अक्टूबर 1956 को नागपुर में विशाल जनसमुदाय के सामने बौद्ध धर्म ग्रहण किया। उनके साथ बड़ी संख्या में उनके अनुयायियों ने भी बौद्ध धर्म स्वीकार किया। सरकारी संकलन में उनके धर्म-परिवर्तन की घोषणा तथा 14 अक्टूबर 1956 को नागपुर में निर्धारित समारोह का विवरण मिलता है। धर्म-दीक्षा के बाद अम्बेडकर ने अपने अनुयायियों को बुद्ध के धम्म के अनुरूप जीवन जीने का संदेश दिया। उपलब्ध अभिलेख में उनके द्वारा यह प्रतिज्ञा करने का उल्लेख है कि वे आगे बुद्ध की शिक्षाओं के अनुसार आचरण करेंगे।²⁹ इस प्रकार 14 अक्टूबर 1956 का

नागपुर धर्म-दीक्षा समारोह केवल व्यक्तिगत धर्म-परिवर्तन नहीं था; यह भारत में एक बड़े सामाजिक और धार्मिक पुनर्जागरण का प्रतीक बन गया।

अम्बेडकर की बौद्ध व्याख्या को प्रायः नवयान (Navayana) कहा जाता है। उन्होंने बौद्ध धम्म को आधुनिक लोकतांत्रिक मूल्यों, समानता, स्वतंत्रता, बंधुत्व और सामाजिक न्याय के साथ जोड़कर देखा। इस प्रकार यह बौद्ध धर्म का नवआधुनिक रूप भी कहा जा सकता है। उनके लिए बुद्ध का धम्म किसी अलौकिक सत्ता पर निर्भर धार्मिक व्यवस्था की अपेक्षा नैतिक और सामाजिक जीवन का मार्ग था। इसलिए अम्बेडकर का बौद्ध चिंतन पारंपरिक थेरवाद या महायान की मात्र पुनरावृत्ति नहीं था; उसमें आधुनिक सामाजिक प्रश्नों के समाधान का प्रयास दिखाई देता है।³⁰ अम्बेडकर के बौद्ध धर्म ग्रहण का सबसे महत्वपूर्ण सामाजिक पक्ष जाति-व्यवस्था का निषेध था। उन्होंने अनुभव किया था कि अस्पृश्यता केवल सामाजिक व्यवहार की समस्या नहीं है, बल्कि जाति-व्यवस्था की संरचना से जुड़ी हुई है। बौद्ध धर्म को स्वीकार करके उन्होंने दलितों के लिए एक वैकल्पिक सामाजिक पहचान प्रस्तुत की।³¹ इससे धर्म-परिवर्तन व्यक्तिगत आस्था के साथ-साथ सामूहिक आत्मसम्मान और सामाजिक मुक्ति का माध्यम भी बना।

अम्बेडकर के बौद्ध धर्म का मूल्यांकन

अम्बेडकर और बौद्ध धर्म के संबंध का मूल्यांकन करते समय यह समझना आवश्यक है कि उनका बौद्ध धर्म ग्रहण किसी अचानक उत्पन्न धार्मिक भावना का परिणाम नहीं था। यह उनके लंबे वैचारिक विकास का परिणाम था। उन्होंने धर्म को सामाजिक न्याय की कसौटी पर परखा और अंततः बुद्ध के धम्म को अपने आदर्शों के सबसे अनुकूल पाया।³² उनकी दृष्टि में धर्म का उद्देश्य मनुष्य को विभाजित करना नहीं, बल्कि समाज में नैतिकता और बंधुत्व स्थापित करना होना चाहिए। इसीलिए बौद्ध धर्म उनके लिए धर्म से अधिक एक सामाजिक-नैतिक जीवन-दर्शन बन गया।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर का निधन 6 दिसंबर 1956 को दिल्ली में हुआ। उनका जीवन संघर्ष, आत्मसम्मान, शिक्षा और सामाजिक परिवर्तन का अद्वितीय उदाहरण है। जिस बालक को जन्म के कारण अपमान और भेदभाव सहना पड़ा, उसी ने आगे चलकर विश्व के प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों में उच्च शिक्षा प्राप्त की, अर्थशास्त्र और विधि के क्षेत्र में विद्वता अर्जित की, भारत के प्रथम विधि मंत्री के रूप में कार्य किया और संविधान की प्रारूप समिति के अध्यक्ष के रूप में आधुनिक भारत के निर्माण में ऐतिहासिक भूमिका निभाई।

निष्कर्ष

अतः डॉ. अम्बेडकर को केवल दलित समाज के नेता के रूप में सीमित करना उचित नहीं है। वे आधुनिक भारत के महान राष्ट्र निर्माताओं में से एक थे। उन्होंने सामाजिक न्याय को राजनीतिक लोकतंत्र का आधार माना और समानता, स्वतंत्रता तथा बंधुत्व को भारतीय लोकतंत्र की आत्मा के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया। उनका जीवन इस बात का प्रमाण है कि विपरीत परिस्थितियों में भी शिक्षा, आत्मविश्वास, संगठन और संघर्ष के माध्यम से व्यक्ति इतिहास की दिशा बदल सकता है।

डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर के जीवन में बौद्ध धर्म केवल धार्मिक परिवर्तन का विषय नहीं था, बल्कि यह सामाजिक समानता, मानवीय गरिमा, स्वतंत्रता, बंधुत्व और जाति-विहीन समाज की उनकी व्यापक परियोजना का महत्वपूर्ण हिस्सा था। लगभग तीन दशकों तक विभिन्न धर्मों का अध्ययन करने के बाद अम्बेडकर इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि बौद्ध धर्म उनके सामाजिक और नैतिक आदर्शों के सबसे निकट है। स्वयं अम्बेडकर ने 1956 में लिखी *The Buddha and His Dhamma* की भूमिका में कहा कि उन्होंने लगभग 35 वर्षों तक विभिन्न धर्मों का अध्ययन करने के बाद बुद्ध के धर्म को श्रेष्ठ माना।

आज भी डॉ. अम्बेडकर का चिंतन सामाजिक समानता, मानवाधिकार, लोकतंत्र और न्याय के प्रश्नों पर अत्यंत प्रासंगिक है। उनका व्यक्तित्व सामान्य व्यक्ति के लिए प्रेरणा का स्रोत है, क्योंकि उन्होंने व्यक्तिगत पीड़ा को सामाजिक परिवर्तन के व्यापक संघर्ष में परिवर्तित कर दिया। इसलिए वे केवल एक समुदाय के नेता नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय, संवैधानिक लोकतंत्र और आधुनिक भारत की चेतना के महान निर्माता के रूप में सदैव स्मरण किए जाएंगे।

संदर्भ सूची :

01. Ambedkar, Dr. B.R.(1993); *Waiting for a Visa, Dr. Babasaheb Ambedkar: Writings and Speeches*, Vol. 12; Education Department, Government of Maharashtra, P 661
02. Keer, Dhananjay (2005); *Dr. Ambedkar: Life and Mission*; Mumbai, Popular Prakashan, P- 65
03. Jaffrelot, Christophe (2005); *Dr Ambedkar and Untouchability: Analysing and Fighting Caste*; London, C. Hurst & Co., P- 23
04. शास्त्री, शंकरानन्द (1990); *युग पुरुष डॉ० भीमराव अम्बेडकर*; नई दिल्ली, दि जनता पब्लिकेशन, पृ० 17-18
05. Keer, Dhananjay (2005); *Dr. Ambedkar: Life and Mission*; Mumbai, Popular Prakashan, P- 18-35
06. Zelliot, Eleanor (1992); *From Untouchable to Dalit: Essays on the Ambedkar Movement*; New Delhi, Manohar Publications, P- 67
07. Ambedkar, Dr. B.R. (1923); *The Problem of the Rupee: Its Origin and Its Solution*; London, P.S. King & Son, P- 07
08. Keer, Dhananjay (2005); *Dr. Ambedkar: Life and Mission*; Mumbai, Popular Prakashan, P- 49-51
09. Jaffrelot, Christophe (2003); *India's Silent Revolution: The Rise of the Lower Castes in North India*; New York, Columbia University Press, P- 27-31
10. Ambedkar, Dr. B.R. *Writings and Speeches*, Vol- 17, Part I; Government of Maharashtra, P- 25
11. Ambedkar, Dr. B.R. (1945); *What Congress and Gandhi Have Done to the Untouchables*; Bombay, Thacker & Co., P- 21-25
12. Ambedkar, Dr. B.R.; *Dr. Babasaheb Ambedkar: Writings and Speeches*, Vol- 2, P- 301
13. इण्डियन राउण्ड टेबल कांफ्रेंस, (1930-31), प्रोसिडिंग 1223
14. Constituent Assembly Debates (29 August 1947); Drafting Committee
15. Austin, Granville(1966); *The Indian Constitution: Cornerstone of a Nation*; New Delhi, Oxford University Press, P- 308-14
16. Rege, Sharmila (2013); *Against the Madness of Manu: B.R. Ambedkar's Writings on Brahmanical Patriarchy*; New Delhi, Navayana, P-23

17. Constituent Assembly Debates (25 November 1949); Dr. B.R. Ambedkar
18. वाली, एल. आर.(1991); डॉ. अम्बेडकर जीवन और मिशन; नई दिल्ली, अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिकेशन, पृ. 332
19. अम्बेडकर, डॉ० भीमराव; *मुक्ति कोन पथे?* अखिल बंबई इलाका महार परिषद् में दिये गये भाषण के अंश।
20. दिघे, प्रभाकर; *महामानव डॉ बाबासाहेब आंबेडकर*, पृ. 153
21. अंबेडकर : *स्टेट्स एण्ड माइनोरटवेज*, पृ. 37
22. Ambedkar, Dr. B.R. (1990); *Pakistan or the Partition of India*, in Dr, Babasaheb Ambedkar : Writings and Speeches, Vol- 8; Mumbai, Government of Maharashtra, P- 289
23. Ambedkar, Dr. B.R. (2003); *Dr. Babasaheb Ambedkar : Writings and Speeches*, Vol- 17, Part I; Mumbai, Government of Maharashtra, P- 66–67
24. Keer, Dhananjay (2005); *Dr. Ambedkar: Life and Mission*; Mumbai, Popular Prakashan, P- 490
25. Zelliott, Eleanor; *From Untouchable to Dalit*, P- 174–180
26. Ambedkar, Dr. B.R.(1957); *The Buddha and His Dhamma*; Bombay, Siddharth College Publications, P- 06
27. Ambedkar, Dr. B.R.; *The Buddha and His Dhamma*; Book I; Siddhartha Gautama—How a Bodhisattva Became a Buddha, P- 25
28. Ambedkar, Dr. B.R.; *The Buddha and His Dhamma*; Book II, The Buddha and His Dhamma, P- 39–120
29. Ambedkar, Dr. B.R.(1956); *Dr. Babasaheb Ambedkar : Writings and Speeches*, Vol- 17, Part III; *The Buddha Dhamma Will Be the Saviour of the World*, P- 529–65
30. Ambedkar, Dr. B.R.(1936); *Annihilation of Caste*.
31. Mendelsohn, Oliver and Vicziany, Marika(1998); *The Untouchables: Subordination, Poverty and the State in Modern India*; Cambridge University Press, P- 79
32. Ambedkar, Dr. B.R.(1946); *What Congress and Gandhi Have Done to the Untouchables*; P- 195–97